विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-
आजीवन शुल्क रु. ५००/-

बुद्धवर्ष 2562, अधिक ज्येष्ठ पूर्णिमा 29 मई, 2018, वर्ष 47, अंक 12

For online Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

"सब्बे सङ्खारा दुक्खा"ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥

धम्मपदपालि- २७८, मग्गवग्गो

"सारे संस्कार दु:ख हैं" (यानी, जो कुछ उत्पन्न होता है, वह नाशवान होने के कारण दु:ख ही है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-) प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको सभी दु:खों से निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात, दु:ख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) - ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!

क्या है बुद्ध-शिक्षा

तीसरा व्याख्यान, भाग-1.... (दि. 14 अक्टूबर, 1951)

— थ्रे सिदु सयाजी ऊ बा खिन

(रंगून के पगोडा रोड स्थित मेथोडिस्ट गिरजाघर में धर्म जिज्ञासुओं की एक सभा में बर्मा सरकार के महालेखापाल (अकाउंटेंट जनरल) कम्मट्ठानाचार्य थ्रे सिदु ऊ बा खिन ने तीन व्याख्यान दिये, जिनका अनु. यहां क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं।)

— (अनु.: स. ना. गोयन्का)

देवियो और सज्जनो!

जब तक मैं ''प्रतीत्य समुत्पाद'' (सकारण उत्पत्ति) और 'पट्ठान' (कार्य-कारण संबंध) के नियमों पर थोड़ा भी प्रकाश न डाल लूं, तब तक ''क्या है बुद्ध-शिक्षा'' विषय पर मेरा वक्तव्य पूरा नहीं माना जायगा।

अपने प्रथम प्रवचन के अंत में मैंने बताया था कि किस प्रकार तपस्वी राजकुमार सिद्धार्थ सम्यक संबोधि प्राप्त कर सम्यक संबुद्ध हुआ। आपकी स्मृति ताजा करने के लिए मैं अपने उक्त कथन को फिर दुहराता हूं :–

''राजकुमार सिद्धार्थ सचमुच सम्यक संबोधि प्राप्त कर सम्यक संबुद्ध बन गया -- जाग्रत, प्रकाशमान, और सर्वज्ञ। जाग्रत ऐसा कि जिसकी तुलना में बाकी सारे लोग सो रहे थे और स्वप्निल थे। प्रकाशमान ऐसा कि जिसकी तुलना में बाकी सारे लोग अंधकार में भटक रहे थे और ठोकरें खा रहे थे। सर्वज्ञ ऐसा कि जिसकी तुलना में बाकी सारे लोग केवल अविद्या की ही जानकारी रखते थे।''

सारे धर्म संप्रदाय निस्संदेह सत्य का ही मार्ग दिखाने का दावा करते हैं। बुद्ध-शिक्षा के अनुसार भी जब तक कोई परमार्थ सत्य (चार आर्य सत्यों) का स्वयं साक्षात्कार नहीं कर लेता तब तक अविद्याग्रस्त ही माना जाता है। यह '**अविद्या**' ही है जो कि संस्कारों को जन्म देती है। इन संस्कारों से ही सभी प्राणियों में विज्ञानरूपी जीवनधारा प्रवाहित होती है। विज्ञानरूपी जीवनधारा के स्थापित होते ही नाम और रूप स्वत: अन्योन्याश्रित हो जाते हैं। नाम और रूप के संयोग से शरीर बनता है और फिर षट् इंद्रियों (षड़ायतन) का विकास होता है। इन इंद्रियों से स्पर्श उत्पन्न होता है और इंद्रियों द्वारा विषयों का स्पर्श होते ही वेदना (सुख, दु:ख और असुख-अदु:ख) उत्पन्न होती है। वेदना से तण्हा (तृष्णा) उत्पन्न होती है और तण्हा से उपादान (तीव्र लालसा)। यह उपादान ही है जो कि भव का कारण है और भव ही जन्म, जरा, रोग, मृत्यु, शोक, परिताप, पीड़ा आदि का कारण है जो कि सब के सब दु:ख रूप हैं।

इस प्रकार बुद्ध ने जान लिया कि दु:ख स्कंध का मूल कारण अविद्या ही है।

भगवान ने कहा:--

''अविद्या प्रत्यय (कारण) है संस्कारों का, संस्कार प्रत्यय है विज्ञान का, विज्ञान प्रत्यय है नाम-रूप का, नाम-रूप प्रत्यय है षड़ायतन का, षड़ायतन प्रत्यय है स्पर्श का, स्पर्श प्रत्यय है वेदना का, वेदना प्रत्यय है तृष्णा का, तृष्णा प्रत्यय है उपादान का, उपादान प्रत्यय है भव का, भव प्रत्यय है जन्म का, जन्म प्रत्यय है जरा, रोग, मृत्यु, शोक, परिताप, पीड़ा आदि का, जो कि सब दु:ख ही है।''

इस उत्पत्ति-शृंखला का ही नाम प्रतीत्य समुत्पाद है और हम देखते हैं कि सभी उत्पत्तियों के मूल में अविद्या है। अविद्या यानी सत्य के संबंध में अज्ञानता। वैसे मोटे तौर पर हम कह देते हैं कि दु:ख का कारण तृष्णा है। बहुत सीधी-सी बात है। हमें कोई वस्तु चाहिए। तो हमारे मन में उसके प्रति तृष्णा जागती है। तृष्णा जागते ही हम उसे पाने के लिए प्रयत्न करने लगते हैं, नाना दु:ख उठाने लगते हैं। परंतु मात्र इतना जान लेना ही पर्याप्त नहीं है। भगवान ने कहा है-- ''ये जो पांच स्कंध हैं, ये जो केवल नाम और रूप से ही बने हुए हैं, ये भी दु:ख ही हैं।'' बुद्ध-शिक्षा में दु:ख आर्य सत्य की पूरी जानकारी तब मानते हैं जबकि नाम और रूप को-- बाहर और भीतर-- उनके वास्तविक स्वरूप में देख लिया जाय, न कि बाह्य दिखावटी रूप में।

अत: दु:ख आर्य सत्य को समझने के लिए यह आवश्यक है कि पहले इसका अनुभव किया जाय। एक उदाहरण लें। विज्ञान ने हमें सिखाया है कि संसार में जो कुछ विद्यमान है वह असंख्य विद्युत कणों के संचालन द्वारा उत्पन्न प्रकंपन मात्र है। परंतु हममें से कितने इस तथ्य को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं कि हमारे शरीर पर भी यही सिद्धांत लागू होता है। तो क्यों न हम इसी तथ्य का अनुभव करके देखें, जो कि स्वयं हमसे संबंधित है। परंतु इसके लिए आवश्यक है कि हम अपनी शारीरिक स्थिति से ऊंचा उठें। हम अपनी मानसिक शक्तियों का विकास करें और इतना करें कि वस्तुस्थिति का सही निरीक्षण करने योग्य हो जायँ। विकसित मानसिक शक्तियों द्वारा हम इतनी गहराई तक देख सकते हैं जो कि आधुनिकतम वैज्ञानिक यंत्रों द्वारा भी संभव नहीं है। यदि ऐसा है तो क्यों न हम अपने भीतर एक दृष्टि डालें और देखें कि वहां क्या हो रहा है। देखें, ये अणु, परमाणु, विद्युत्कण आदि किस प्रकार तेजी से क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहे हैं-- अनवरत, अनंत। परंतु इस प्रकार भीतर की ओर देखना सरल नहीं है।

मैं अपने एक शिष्य की डायरी के कुछ एक उद्धरण पढ़कर सुनाता हूं, जिससे आपको भान होगा कि यह आंतरिक दु:ख वस्तुत: क्या है। उद्धरण इस प्रकार है :–

''21-8-51, जैसे ही साधना आरंभ की, मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो

कोई मेरे सिर में बरमे से छेद कर रहा है और फिर लगा कि सारे सिर पर चींटियां चलने लगी हैं। मेरी इच्छा हुई कि मैं अपना सिर खुजला लूं। परंतु गुरुजी ने ऐसा करने से मना कर दिया। मैंने देखा घंटे भर में जामुनी रंग से रंजित चमचमाते नीले रेडियम परमाणु धीरे-धीरे मेरे सारे शरीर में समा गये। ध्यानगुहा में लगातार तीन घंटे तक साधनारत रहते हुए मैं (बाहरी वातावरण से) बिल्कुल संज्ञाशून्य हो गया और तभी मेरे शरीर में एक भयानक झटका-सा लगा। मैं बिल्कुल भयभीत हो जाता, परंतु मेरे गुरु महाराज ने मुझे साधना में लगे रहने के लिए प्रोत्साहित किया। मैंने अनुभव किया कि मेरा सारा शरीर उत्तप्त हो गया है और मेरे अंग-प्रत्यंग में विद्युत की-सी सूइयां चुभने लगी हैं।

''22-8-51, आज भी मैं लगभग तीन घंटे साधना करता रहा। मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मेरा सारा शरीर आग की लपटों में समाया हुआ है। मैंने देखा कि नीले और जामुनी रंग के किरण स्फुलिंग मेरे सारे शरीर में बिना किसी लक्ष्य के ऊपर से नीचे की ओर गतिमान हैं। तब मेरे गुरु ने मुझे समझाया कि शरीर में यह जो (अनवरत) परिवर्तन हो रहा है, यह 'अनिच्च' (अनित्य) है और इससे जो पीड़ा हो रही है, यही दु:ख है। हमें इसी पीड़ा या दु:ख से विमुक्त होना है।

''23-8-51, गुरुजी ने मुझे आदेश दिया कि बिना प्रकाश-किरणों के सहारे मैं अपनी छाती पर ध्यान केंद्रित करूं और यह भी बताया कि अब हम शरीर दर्शन (कायानुपश्यना) की स्थिति पर पहुँच रहे हैं। मैंने ऐसा ही किया और इस निर्णय पर पहुँचा कि हमारा शरीर दु:ख से परिपूर्ण है।''

समाधि (एकाग्रचित्त) के बल से विपश्यना द्वारा हम भीतर की ओर देखते हैं और आणविक प्रकंपन, विकीर्णन और संघर्षण की तीव्र वेदना महसूस करते हैं। तभी हमें इस ''आंतरिक दु:ख'' का यथार्थ अनुभव होता है। इस सत्य को न जानना ही अविद्या है। और इसे अपने परमार्थ रूप में जान लेना ही अविद्या का नाश कर लेना है; उस अविद्या का जो कि दु:ख की जननी है, जो कार्य-कारण शृंखला द्वारा इस जीवनधारा को प्रवाहित करती है, जो स्वभाव से ही जरा, व्याधि, पीड़ा, परिताप और चिंता आदि से परिपूर्ण है।

यह हुआ प्रतीत्य-समुत्पाद और दु:ख के मूल उद्गम का वर्णन। अब हम कार्य-कारण संबंध के नियमों पर भी जरा दृष्टिपात करें। इसे भगवान ने अभिधम्म पिटक की पट्ठान नीति में आख्यात किया है। भगवान ने सम्यक संबोधि प्राप्त कर जब 49 दिनों तक अनवरत ध्यान किया तब इसी सिद्धांत का विश्लेषणात्मक चिंतन करते हुए उनके शरीर से छह-रंगी किरणें प्रस्फुटित हुई थीं। पालि साहित्य में इस गंभीर विषय पर पांच सौ पृष्ठों के पांच ग्रंथ हैं। मैं तो आपको इसका केवल आभास मात्र ही दे सकूंगा।

बुद्ध-शिक्षा के कार्य-कारण सिद्धांत के मूलाधारस्वरूप 24 प्रकार के प्रत्यय माने जाते हैं। ये हैं:--

(1) हेतु प्रत्यय, (2) आलंबन प्रत्यय, (3) अधिपति प्रत्यय, (4) अनंतर प्रत्यय, (5) समानांतर प्रत्यय, (6) सहजात प्रत्यय, (7) अन्यमन्य प्रत्यय, (8) निश्रय प्रत्यय, (9) उपनिश्रय प्रत्यय, (10) पुरेजात प्रत्यय, (11) पच्छाजात प्रत्यय, (12) आसेवन प्रत्यय, (13) कर्म प्रत्यय, (14) विपाक प्रत्यय, (15) आहार प्रत्यय, (16) इंद्रिय प्रत्यय, (17) ध्यान प्रत्यय, (18) मार्ग प्रत्यय, (19) संप्रयुक्त प्रत्यय, (20) विप्रयुक्त प्रत्यय, (21) अस्ति प्रत्यय, (22) नास्ति प्रत्यय, (23) विगत प्रत्यय, (24) अविगत प्रत्यय।

अब मैं हेतु और **कर्म** के पारस्परिक संबंधों और उनके कारण उत्पन्न **कर्मफल** को जितना समझ पाया हूं, आपको बताऊंगा।

कायिक, वाचिक अथवा मानसिक कर्म के प्रत्येक सचेतन क्षण में जो मनोस्थिति होती है, वही हेतु है। इस कारण प्रत्येक कर्म एक मनोस्थिति उत्पन्न करता है जो कि या तो कुशल है या अकुशल। बुद्ध मान्यतानुसार

इन्हें ही हम कुशल धर्म, अकुशल धर्म और अब्याकत धर्म कहते हैं। ये धर्म क्या हैं? ये मानसिक शक्तियां मात्र हैं जो कि मिलजुल कर **'संस्कार लोक'** का निर्माण करती हैं जिसका कि वर्णन मैं प्रथम व्याख्यान में कर आया हूं।

कुशल शक्तियां-- ऐसी धनात्मक शक्तियां हैं जो कि दान, सेवा, श्रद्धा, भक्ति, चित्त-विशुद्धि जैसी सद्वृत्तियों से अनुप्रेरित कायिक, वाचिक और मानसिक शुभ कर्मों द्वारा उत्पन्न होती हैं।

अकुशल शक्तियां-- ऐसी ऋणात्मक शक्तियां हैं जो कि तृष्णा, एषणा, क्रोध, घृणा, असंतोष, प्रवंचना जैसी दुष्प्रवृत्तियों से अनुप्रेरित कायिक, वाचिक और मानसिक अशुभ कर्मों द्वारा उत्पन्न होती हैं।

अब्याकत शक्तियां-- ये न कुशल हैं, न अकुशल। यह अरहंतों की नित्य अवस्था है। उनकी जिन्होंने कि अविद्या को पूर्णतया छिन्नमूल कर दिया है। अरहंत की इंद्रिय जब किसी इंद्रियगम्य विषय को स्पर्श करती है तो फलस्वरूप जो वेदना (अनुभूति) उत्पन्न होती है, वह न कुशलधर्मा है, न अकुशलधर्मा। अत: इससे कोई तृष्णामूलक गंभीर प्रभाव नहीं पड़ सकता। वैसे ही जैसे कि सतत परिवर्तनशील प्रवाहमय जल पर कोई छाप नहीं पड़ सकती। अरहंत के लिए तो शरीर का संपूर्ण ढांचा ही सतत परिवर्तनशील परमाणु पुंज है और इसलिए इस पर पड़ी हुई कोई भी छाप, इस पुंज के साथ ही विघटित हो जाती है।

आओ, अब हम देखें, सहेतुक कर्मों द्वारा उत्पन्न कुशल और अकुशल शक्तियों का विभिन्न प्राणी लोकों से क्या संबंध है। परंतु पहले आपको प्राणी लोकों का विभाजन समझा दूं। ये हैं :--

(1) अरूप और रूप ब्रह्मलोक-- ये लोक इंद्रियजन्य वासनाओं के प्रभाव से परे हैं। चित्त के चार महान गुण धर्म हैं-- परम मैत्री, परम करुणा, परम मुदिता (औरों की सफलता और उन्नति देख कर मुदित होना) और परम उपेक्षा। इन चित्त धर्मों से नितांत विशुद्ध, तेजस्वी, विपुल आनंदमयी, शांत और लघिष्ठ (हलकी) मानसिक शक्तियों का प्रजनन होता है जो कि इन सर्वोच्च प्राणीलोक में स्थापित होती हैं। इसलिए यहां के रूप ब्रह्मलोकों के भौतिक पदार्थ अत्यंत सूक्ष्म हैं और यहां केवल दीप्ति मात्र है। यही कारण है कि इन लोकों के निवासियों के विमान और शरीर, स्थूल भौतिक पदार्थों से नहीं बने हैं बल्कि दीप्ति या प्रकाश मात्र से बने हैं। अरूप ब्रह्मलोकों में तो भौतिकता का लेशमात्र भी नहीं है।

(2) काम वासना लोक-- ये तीन हैं -- (1) देवलोक, (2) मानव लोक, और (3) अधोलोक

(1) देवलोक-- वे सारे कायिक, वाचिक या मानसिक कुशल कर्म जो कि किंचित भी रागरंजित हैं, ऐसी मानसिक शक्तियों का सृजन करते हैं जो कि बहुत कुछ विशुद्ध, तेजस्वी, आनंदमयी और लघिष्ठ हैं। ये शक्तियां ऐसे उच्च देवलोकों में स्थापित होती हैं जहां का भौतिक पदार्थ भी बहुत कुछ सूक्ष्म, प्रकाशमान, आनंदमय और लघिष्ठ (हलका) है। तभी तो इन देवलोकों के निवासियों के शरीर भी सूक्ष्म और वायव्य हैं। अलग अलग देवों की शारीरिक सूक्ष्मता, तेजस्विता, वर्ण लावण्यता अलग-अलग देवलोक के अनुरूप कम या अधिक है। साधारणतया ये देव तब तक स्वर्गीय आनंद का उपभोग करते हैं जब तक कि उनके कुशल कर्मों की संचित मानसिक शक्तियां क्षीण नहीं हो जातीं और ऐसा हो जाने पर अधिकतर ये लोग निम्नतर लोकों में ही पुनर्जन्म ग्रहण करते हैं। विशिष्ट विकसित प्राणियों की बात अलग है।

(2) मानवलोक की चर्चा मैं पीछे करूंगा। (3) पहले अधोलोक की चर्चा कर लेना चाहता हूं।

(3) अधोलोक-- समस्त कायिक, वाचिक और मानसिक अकुशल

(द्वेषपूर्ण और पापपूर्ण) कर्म ऐसी मानसिक शक्तियों का सृजन करते हैं जो कि स्वभाव से ही अपवित्र, अंधकारपूर्ण, जलनशील, गरिष्ठ, कठोर और रुक्ष हैं। इनमें भी जो सर्वाधिक अपवित्र, अंधकारपूर्ण, जलनशील, गरिष्ठ, कठोर और रुक्ष मानसिक शक्तियां हैं, वे चार अधोलोक के निम्नतम भाग, निरय (नरक) लोक में स्थान पाती हैं। स्वभावत: इन लोकों में जो भौतिक पदार्थ हैं वे कठोर, रुक्ष, उत्तप्त और अप्रिय हैं। ये उन सब प्राणियों के लिए हैं जो कि (अपने दुष्कर्मों के परिणामस्वरूप) ऐसे अधोलोकों के लिए नियत हैं। मानवलोक इन अधोलोकों से जरा ही ऊपर है। पशु-पक्षियों को छोड़ कर इन अधोलोकों के अन्य प्राणी दृश्यमान नहीं हैं, साधारण नेत्रों से नहीं देखे जा सकते। हां, जिसने समाधि-शक्ति द्वारा दिव्य-दृष्टि प्राप्त कर ली है, वह इन्हें अवश्य देख सकता है। यहां दु:ख की ही प्रधानता है-- शारीरिक भी और मानसिक भी। ये लोक देवलोकों से सर्वथा विमुख हैं।

(2) मानवलोक-- अब मैं मानव लोक की थोड़ी-सी चर्चा करूंगा। यह लोक स्वर्ग और नरक के बीच स्थित है। यहां हम दु:ख और सुख दोनों का अनुभव करते हैं। इनकी न्यूनाधिक मात्रा हमारे पूर्वकृत कर्मों पर निर्भर करती है। यहीं से हम अपनी मानसिक अवस्था को उन्नत करके ऊर्ध्व लोकों से अपनी पूर्व-संचित कुशल मानसिक शक्तियों को खींच सकते हैं, उनसे बल प्राप्त कर सकते हैं। यहीं से हम दुराचार और दुष्प्रवृत्तियों की गहराइयों तक जा सकते हैं और अधोलोक की शक्तियों से संतुलन स्थापित कर सकते हैं। न यहां ऊर्ध्व लोकों का-सा एकांतिक सुख है और न अधोलोकों का-सा एकांतिक दु:ख। आज जो संत है, कल वही महान दुष्ट भी हो सकता है। आज जो धनी है, कल वही निर्धन भी हो सकता है। यहां जीवन में बहुत स्पष्ट उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। किसी की भी स्थिति अपरिवर्तनीय नहीं है, स्थिर नहीं है। न मनुष्य की, न परिवार की, न समाज की और न राष्ट्र की। सब के सब कर्म सिद्धांत के आधीन हैं। चूंकि कर्म की उत्पत्ति मन से होती है और मन सतत परिवर्तनशील है, अत: कर्म विपाक का भी परिवर्तनशील होना अनिवार्य है।

यह जो धरती की ओर खिंचाव का अर्थात गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत है, इसका मूल कारण यही है कि हमारे पांव तले की धरती में विभिन्न प्रकार की दुष्ट मानसिक शक्तियां समायी हुई हैं। जब तक मनुष्य में अशुद्धता निहित है, और साधारणतया तो ऐसा है ही, तब तक तो उसे यह अधोमुखी खिंचाव सहना ही होगा। और यदि मृत्यु के क्षण उसकी मनोस्थिति अधोलोक की इन मानसिक शक्तियों से संबद्ध हुई तो उसका पुनर्जन्म स्वत: उसी लोक में होगा-- अपने अकुशल कर्मों के संचय का भुगतान देने के लिए। दूसरी ओर, मृत्यु के क्षण यदि उसकी मनोस्थिति मानव लोक की शक्तियों से संबद्ध रही तो उसका भावी जन्म पुन: मानवलोक में ही हो सकता है। और यदि मृत्यु के क्षण उसकी मनोस्थिति अपने कुशल कर्मों की स्मृति में लीन रही तो उसका पुनर्जन्म साधारणतया देवलोक में ही होगा जहां कि वह अपनी कुशल मानसिक शक्तियों द्वारा संचित जमा खाते की कर्म-पूंजी का उपभोग कर सके। इसी प्रकार मृत्यु के क्षण यदि किसी का चित्त नितांत विशुद्ध और प्रशांत है, काम-राग-छंद से मुक्त है, तो वह ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बुद्ध-शिक्षा में 'कर्म' का हिसाब-किताब कितना यथार्थ है, सुतथ्यपूर्ण है, परिछिन्न है।

सज्जनो और सन्नारियो! बुद्ध की शिक्षाओं का यही सार है। आप जानना चाहेंगे कि इन शिक्षाओं से किसी व्यक्ति को कितना लाभ पहुँचता है? उतना ही जितना कि वह इनका पालन करता है। यह नियम जैसे व्यक्ति पर, वैसे ही परिवार, समाज और राष्ट्र पर भी लागू होता है। हम देखते हैं कि कुछ लोग इसलिए बुद्धानुयायी हैं कि उन्हें इस धर्म पर श्रद्धा है और कुछ लोग इसलिए कि वे इसका पालन करते हैं। परंतु अधिकांश लोग तो ऐसे हैं जो कि बुद्धानुयायी परिवार में जन्म लेने के कारण ही अपने आपको बुद्धानुयायी कहते हैं। लेकिन वस्तुत: जो लोग बुद्ध-शिक्षा का ठीक-ठीक पालन करते हैं वे ही अपनी मनोदशा और मानसिक दृष्टिकोण का सुधार कर सकते हैं। अधिक नहीं तो कोई केवल पंचशील का ही पालन करे। वह कुछ सीमा तक बुद्ध का अनुयायी कहा जायगा। बर्मा के बुद्धानुयायी यदि केवल पंचशील का ही पालन करें तो देश में यह जो आंतरिक गृह कलह हो रहा है वह समाप्त हो जाय। लेकिन एक और भी कठिनाई है और वह है शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति। कोई भी हो, उसे जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएं तो चाहिए ही। अधिकांश लोगों की दृष्टि में तो जीना ही परम आवश्यक है। उनके लिए जीवन से अधिक मूल्यवान और कुछ भी नहीं है। इसलिए वे अपनी तथा अपने परिवार वालों की जिंदगी बनाये रखने के लिए किसी भी प्रकार के अनुशासन का नियम भंग करने से नहीं हिचकिचाते, चाहे वह धार्मिक अनुशासन हो अथवा सरकारी। परंतु वे यह नहीं सोचते कि वर्तमान जीवन के कष्टों का उत्तरदायित्व उनकी अपनी पूर्वकालीन अकुशल वृत्तियों पर ही निर्भर है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि अधिक से अधिक शुद्ध और कुशल मानसिक शक्तियों का सृजन और विकास किया जाय ताकि मानव समाज पर छायी हुई अकुशल और दुष्ट मानसिक शक्तियों का सामना किया जा सके। परंतु यह काम इतना सरल नहीं है। बिना सद्गुरु की सहायता के शुद्ध मानसिक स्थिति के स्तर तक नहीं पहुँचा जा सकता। दुष्ट प्रवृत्तियों का सामना करने के लिए यदि हमें प्रभावशाली शक्तियां चाहिए तो वे धर्म के मार्ग से ही प्राप्त की जा सकती हैं। आधुनिक विज्ञान ने हमें, भला या बुरा जैसा भी है, यह अणुबम दे दिया है। मनुष्य की बुद्धि का अत्यंत चमत्कारपूर्ण, परंतु साथ ही अत्यंत भयावह आविष्कार। क्या मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग सही दिशा में कर रहा है? वह बुद्ध की मान्यताओं के अनुसार अच्छी मानसिक शक्तियों का सृजन कर रहा है? या बुरी का? यह तो स्वयं हमारी इच्छा शक्ति पर निर्भर करता है कि हम अपनी बुद्धि को कैसे विषय पर लगाएं और किस प्रकार लगाएं। केवल बाह्य पदार्थजन्य आणविक शक्ति की विजय में ही अपनी बुद्धि लगाने की बजाय हम उसे आभ्यंतरिक आणविक शक्ति की विजय में भी क्यों न लगाएं? इससे हमें आंतरिक शांति मिलेगी जिसे प्राप्त कर हम औरों को भी वितरित कर सकेंगे। हममें से ऐसी विशुद्ध और शक्तिशाली मानसिक शक्तियां प्रवाहित होंगी जो कि हमारे चारों ओर छायी हुई दुष्प्रवृत्तियों का सफल प्रतिरोध कर सकेंगी। एक दीपक के प्रकाश में सारे कमरे के अंधकार को दूर कर सकने की शक्ति है। इसी प्रकार किसी एक व्यक्ति में जाग्रत किया गया प्रकाश अनेकों के अंधकार को दूर कर सकने की क्षमता रखता है।

कोई ऐसा माने कि बुराई के उपकरण से भला हो सकता है तो उसका मानना भ्रांतिमात्र है, मृगमरीचिका मात्र है। कोरिया के मामले को ही लें। अब तक दोनों ओर से शायद दस लाख से भी अधिक लोग मारे जा चुके हैं। इतना होने पर भी क्या शांति के समीप पहुँच पाये हैं? इससे हम यही सबक सीखते हैं कि ऐसी समस्याओं का एक ही समाधान है-- **मानवी मनोवृत्ति को धर्म के माध्यम से परिवर्तित किया जाय।** भौतिक पदार्थों पर ही प्रभुत्व प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि मन पर भी प्रभुत्व स्थापित किया जाय।

क्रमशः... *(सयाजी ऊ बा खिन जर्नल से साभार)*

उड़ीसा के INS CHILIKA में नेवी के जवानों को आनापान

नेवी के लगभग 3000 (तीन हजार) प्रशिक्षणार्थी जवान और अधिकारियों को विपश्यना का परिचय कराते हुए आनापान की साधना सिखायी गयी और सभी समूह-प्रमुखों ने नित्य-नियमित अभ्यास की जिम्मेदारी ली। यह हमारे देश की सभी सेनाओं के जवानों के लिए एक उदाहरण स्वरूप है। सबका मंगल हो! *--(धम्म भुवनेश्वर वि. केंद्र)*

Registered No. NSK/RNP-235/2018-2020

परियत्ति एवं पटिपत्ति में प्रारंभिक तथा उच्च पालि डिप्लोमा पाठ्यक्रम

विपश्यना विशोधन विन्यास तथा दर्शन विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में २०१८-१९ में एक वर्ष का प्रारंभिक तथा उच्च पालि डिप्लोमा पाठ्यक्रम होगा जिसका विषय होगा– बुद्ध की शिक्षा का सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक पक्ष एवं **विपश्यना** का जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग। **पाठ्यक्रम की अवधिः** ३१ जून २०१८ से ३१ मार्च २०१९ तक, प्रत्येक शनिवार को २:०० बजे से ६:०० शाम तक, **योग्यताः** आवेदक कम से कम १२-वीं कक्षा उत्तीर्ण हों। पहले टर्म के अंत में विद्यार्थियों को एक दस-दिवसीय विपश्यना शिविर करना अनिवार्य होगा। **नामांकनः** ११ से १५ जून, २०१८ तक (रविवार को छोड़कर) ११ बजे से २ बजे के बीच, दर्शन विभाग, ज्ञानेश्वर भवन, मुंबई विश्व विद्यालय, विद्यानगरी, कालीना कॅम्पस, सांताक्रुज (पू.) मुंबई- ४०००९८, टेलि.: ०२२-२६५२७३३७। विद्यार्थी अपने साथ सर्टिफिकेट (प्रमाणपत्र) की छायाप्रति और पासपोर्ट साईज फोटो तथा नामांकन फीस १६७०/- रु. अवश्य लायें। **अधिक जानकारी के लिये संपर्क करें –** (१) विपश्यना विशोधन विन्यास, ग्लोबल पगोडाः कार्यालय ०२२-६२४२७५६०, (सुबह ९:३० से सायं. ५:३०), (२) श्रीमती बलजीत लांबा - ९८३३५१८९७९, (३) कु. राजश्री - ९००४६९८६४८, (४) श्रीमती अलका वेंगुर्लेकर - ९८२०५८३४४०.

धम्मालय-2 (आवास-गृह) का निर्माण कार्य

पगोडा परिसर में 'एक दिवसीय' महाशिविरों में सुदूर से आने वाले साधकों तथा धर्मसेवकों के लिए रात्रि-विश्राम की निःशुल्क सुविधा हेतु "धम्मालय-2" आवास-गृह का निर्माण कार्य होगा। जो भी साधक-साधिका इस पुण्यकार्य में भागीदार होना चाहें, वे कृपया संपर्क करें:- 1. Mr. Derik Pegado, 9921227057. or 2.Sri Bipin Mehta, Mo. 9920052156, A/c. Office: 022-62427512/ 62427510; Email: audits@globalpagoda.org; Bank Details: 'Global Vipassana Foundation', Axis Bank Ltd., Sonimur Apartments, Timber Estate, Malad (W), Mumbai - 400064, Branch - Malad (W). Bank A/c No. - 911010032397802; IFSC No.- UTIB0000062; Swift code: AXISINBB062.

पगोडा पर रात भर रोशनी का महत्त्व

पूज्य गुरुजी बार-बार कहा करते थे कि किसी **धातु-गब्भ** पगोडा पर रात भर रोशनी रहने का अपना विशेष महत्त्व है। इससे सारा वातावरण दीर्घकाल तक धर्म एवं मैत्री-तरंगों से भरपूर रहता है। तदर्थ सगे-संबंधियों की याद में ग्लोबल पगोडा पर रोशनी-दान के लिए प्रति रात्रि रु. 5000/- निर्धारित किये गये हैं। संपर्क- उपरोक्त पते पर...

विपश्यना विशोधन विन्यास, ग्लोबल पगोडा में पालि-अंग्रेजी 8 सप्ताह का आवासीय पाठ्यक्रम वर्ष 2018

अवधि: 14 जुलाई से 11 सितंबर तक, **उपरोक्त कार्यक्रम की योग्यता जानने के लिए इस शृंखला का अनुसरण करे-** http://www.vridhamma.org/Theory-And-Practice-Courses. **अधिक जानकारी के लिये संपर्क करें-** श्रीमती बलजीत लांबा-9833518979, श्रीमती अल्का वेंगुर्लेकर- 9820583440, श्रीमती अर्चना देशपांडे- 9869007040, VRI Office : 022-62427560 (9:30AM to 5:30PM), **Email:** Mumbai@vridhamma.org

ग्लोबल पगोडा में सन 2018 के एक-दिवसीय महाशिविर

29 जुलाई- **आषाढ़ी पूर्णिमा, रविवार** 30 सितंबर- **शरद पूर्णिमा** एवं **पूज्य गुरुजी की पुण्य-तिथि** *(29 सितंबर)* के उपलक्ष्य में **एक दिवसीय** महाशिविर होंगे। **समय-** प्रातः 11 बजे से अपराह्न 4 बजे तक। 3 से 4 बजे के प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपो सुखो-** सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्क:** 022-28451170, 022-62427544, Extn. no. 9, 82918 94644. (फोन बुकिंग- प्रतिदिन 11 से 5 बजे तक) Online Regn: www.oneday.globalpagoda.org

दोहे धर्म के

हर हरकत के मूल में, कारण सच्चा देख।
बिन कारण संसार में, पत्ता हिले न एक॥

जो चाहे सुख ना घटे, होय दुखों का नाश।
दासी बन तृष्णा रहे, मत बन तृष्णा दास॥

दुख कारण दुष्कर्म है, दुख कारण ना देव।
तो फिर अपने कर्म को, क्यों न स्वच्छ कर लेव!

दुख का कारण दूर कर, पायी सुख की खान।
दुःख निवारण कर लिया, पुलकित तन-मन प्राण॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा0) लिमिटेड
8, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धर्म रा

चित री चेतन वासना, यो ही तो संस्कार।
यो ही कारण जनम रो, जग मँह बारंबार॥

पसु धरमां नै छोड़ दे, मनुज धरम ले धार।
पसु धरमां रै कारणै, भोग्या दुक्ख अपार॥

उपजै मन मँह पाप भी, मन ही धरम समाय।
मन ही बंधन मुक्ति रो, कारण और उपाय॥

अपणै ही अग्यान स्यूं, रह्यो अमित दुख भोग।
कारण तो जाण्यो नहीं, किण विध मिटसी रोग?

मोरया ट्रेडिंग कंपनी
सर्वो स्टॉकिस्ट-इंडियन ऑईल, 74, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.6,
अजिंठा चौक, जलगांव - 425 003, फोन. नं. 0257-2210372, 2212877
मोबा.09423187301, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

"विपश्यना विशोधन विन्यास" के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष :(02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, 259, सीकाफ लिमिटेड, 69 एम. आय. डी. सी, सातपुर, नाशिक-422 007. बुद्धवर्ष 2562, अधिक ज्येष्ठ पूर्णिमा, 29 मई, 2018

वार्षिक शुल्क रु. 30/-, US $ 10, आजीवन शुल्क रु. 500/-, US $ 100. "विपश्यना" रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

DATE OF PRINTING: 15 May, 2018, DATE OF PUBLICATION: 29 May, 2018

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 244144,
244440. फैक्स : (02553) 244176
Email: vri_admin@dhamma.net.in;
course booking: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org